jewan yatra1:arunjaity.qxd 9/26/2010 9:44 PM Page 12

माँ घर आए अतिथियों का यथोचित सत्कार नहीं कर पाती थी, जिसकी पीड़ा उन्हें कचोटती रहती थी। ऐसे ही किसी अवसर पर घर में कुछ न होने से उद्विग्न मनःस्थिति में उन्होंने घर के पीछे स्थित कुंए में छलांग लगाकर आत्महत्या कर ली थी। नानाजी डेढ़ या दो वर्ष की आयु में ही माँ के वात्सल्य से वंचित रह गए। यह घटना गहरा दंश बनकर उनकी चेतना में समा गई। 21-22 जून 1997 को हिंगोली के डॉ. हेडगेवार रुग्ण चिकित्सालय के कार्यक्रम से निपट कर, उन्होंने 23 जून को अपने गांव कडोली जाकर उस कुंए की विधिवत पूजा करके एक प्रकार से माँ का तर्पण किया था।

11 वर्ष की आयु तक नानाजी 'क ख ग' भी नहीं पढ़ पाए, पर विधाता ने उन्हें कुशाग्र बुद्धि दी थी, जिसके बल पर वे रिसोड़ में आठवीं कक्षा तक प्रत्येक कक्षा में प्रथम स्थान पाते रहे। रिसोड़ में ही नानाजी का संबंध राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से स्थापित हुआ। नियति उनकी जीवन की दिशा तय करने लगी। मैट्रिक तक की पढ़ाई के लिए उन्हें वाशिम आना पड़ा। वहां उन्हें पाठक परिवार का आश्रय मिला। इस परिवार में नानाजी के पिता और बड़े भाई का पहले से आना-जाना था। तीनों पाठक बंधु (भाऊ, तात्या और आबाजी) नानाजी से बहुत स्नेह करते थे। छोटे भाई आबाजी तो नानाजी के समवयस्क और सहपाठी ही थे। नानाजी उस परिवार का अंग बन गए। सहज रूप से घर के सब काम करने में सहयोग देने लगे। वाशिम में संघ-कार्य बहुत प्रभावी था। डॉ. हेडगेवार भी बहुधा वहां आते रहते थे, वाशिम में ही 1934 में डॉक्टर जी ने 17 स्वयंसेवकों को संघ की प्रतिज्ञा दी। इन 17 में नानाजी एवं उनसे 10 साल बड़े उनके ममेरे भाई कृष्णराव भगवंत देशपांडे, एडवोकेट भी थे। तीनों पाठक बंधु भी संघ के स्वयंसेवक थे, वाशिम में नानाजी पूरी तरह संघ-कार्य में रम गए। संघ-मार्ग से राष्ट्रसेवा का भाव उनके मन में दृढ़ होने लगा। 1937 में मैट्रिक की परीक्षा पास करके प्रश्न उठा कि आगे की पढ़ाई कैसे हो? आबा पाठक नानाजी के सहपाठी थे। दोनों के पास ही बाहर जाकर पढ़ने के लिए साधन नहीं थे। इसका नानाजी की कल्पक बुद्धि ने उपाय खोजा। वे और आबा पाठक शहर से फल, सब्जी तथा अन्य घरेलू सामग्री खरीद कर थोड़े-से अधिक भाव पर सम्पन्न परिवारों में पहुंचाने लगे। इस प्रकार दो वर्ष परिश्रम करके उन्होंने आगे की पढ़ाई के लिए कुछ धन इकट्ठा कर लिया। 1939 में चार मित्र, नानाजी, आबा पाठक, बाबा सोनटक्के और वाजीराव देशमुख, सभी इकट्ठे राजस्थान के पिलानी बिड़ला कालेज में अध्ययन के लिए रवाना हो गए।

पिलानी में नानाजी की जन्मजात प्रतिभा और क्षमता का प्रस्फुटन हुआ। 18 रुपए की एक जापानी साईकिल के सहारे वे संघ-कार्य करते और जीविकार्जन करने के साथ ही वे कालेज में चित्रकला, अभिनय और भाषण प्रतियोगिताओं में भाग लेते। शाखा पर कबड्डी और कालेज में फुटबाल की टीमों में बढ़-चढ़ कर खेलते। नेतृत्व का उनका गुण भी सबको दिखाई देने लगा। उस कालेज के संस्थापक सेठ घनश्याम दास बिड़ला की सूक्ष्मदृष्टि से नानाजी की ये अपार क्षमताएं छिपी न रहीं। उन्होंने कालेज प्रिंसिपल सुखदेव पांडे को कहा कि मैं इस लड़के को अपने निजी सहायक के रूप में लेना चाहता हूँ। उसे भोजन-आवास की सुविधा के अतिरिक्त 80 रुपए मासिक पगार भी दूँगा। उस युग में एक कालेज विद्यार्थी के लिए यह सुविधा व वेतन बहुत बड़ा था। पर नानाजी संघ-मार्ग से राष्ट्रसेवा के लिए जीवन-समर्पण का संकल्प ले चुके थे, इसलिए उन्होंने बिड़ला जी के इस प्रलोभक प्रस्ताव को ठुकरा दिया।

1940 में वे संघ की प्रथम वर्ष शिक्षा के लिए नागपुर गए। वहां उन्होंने डॉ. हेडगेवार को असाध्य बीमारी से जूझते देखा। उनके अंतिम भाषण को सुना। वर्ग के बाद डॉक्टर जी की चिंता को धधकते देखा। इस सबका उनके संवेदनशील राष्ट्रभक्त अंतःकरण पर भारी प्रभाव हुआ। उन्होंने पढ़ाई को बीच में ही छोड़कर संघ का पूर्णकालिक कार्यकर्ता बनने का निश्चय कर लिया। डॉक्टर जी के वरिष्ठ सहयोगी बाबासाहेब आप्टे का उन पर भारी प्रभाव था। आप्टे जी ने

तत्कालीन सरसंघचालक
बालासाहब देवरस के साथ